SWAR SINDHU: NATIONAL PEER-REVIEWED/REFEREED JOURNAL OF MUSIC
A UGC CARE LISTED JOURNAL
ISSN 2320-7175 (O) | VOLUME 12, ISSUE 03, DECEMBER, 2024
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org

संगीत गायन में रसोत्पत्ति के तत्व

DR. DEEPIKA SRIVASTAVA[1], ROHIT KUMAR[2]

[1]Associate Professor & HOD, Dept. of Performing and Fine Arts,
School of Languages, Literature & Culture, Central University of Punjab, Bathinda
[2]Research Scholar, Department of Performing and Fine Arts, Central University of Punjab, Bathinda

सार

'रस' शब्द का सम्बंध मानव जीवन के साथ अनादि काल से जुड़ा हुआ है। रस का अभिप्राय आनंद की अनुभूति से है। जो वस्तु हमारे आनंद का कारण बनती है वह हमारे लिए सुंदर भी हो जाती है अर्थात रस ही सौंदर्यता का कारण है। आदिम काल से ही मनुष्य रस अनुभूति के लिए विभिन्न प्रकार की क्रियाओं में संलग्न होता रहा है जैसे प्रजनन क्रिया, क्रीड़ाओं में, भोजन के रसास्वादन में इत्यादि। संसार में हर प्राणी इसी रस के लिए ललायित रहता है व इसकी तलाश में आमरण प्रयास करता रहता है। रस एक ऐसी अखंड अनुभूति है जिसके पश्चात पाठक, श्रोता, दर्शक और कलाकार अथवा सृजनकर्ता ऐसी भाव भूमि की अवस्था में पहुँच जाता है जहां केवल शुद्ध आनंदमयी चेतन ही छाई रहती है। इस भाव भूमि तक पहुँचने के लिए मनुष्य का सांसारिक बंधनों से ऊपर उठना अतिआवश्यक है। प्रस्तुत शोध पत्र द्वारा हम संगीत गायन के ऐसे महत्वपूर्ण तत्वों को जानेंगे जो रस सृष्टि करने में अहम भूमिका निभाते है।

***मुख्य शब्द** : रस, रसोत्पत्ति, भाव, संगीत, आनंद, लय, ताल, आदि।*

भूमिका

'रस' की चर्चा में अनेक संगीत विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रस्तुत किए है। नाट्यशास्त्र के रचनाकार आचार्य भरत को रस सिद्धांत का आचार्य माना जाता रहा है। उन्होंने रस को नाटक तथा काव्य का मुख्य तत्व माना है। इनके पश्चात रस के संदर्भ में भट्ट लोल्लट ने उत्पत्तिवाद, श्री शंकुक ने अनुमतिवाद, भट्ट नायक ने मुक्तिवाद व अभिनवगुप्त ने अभिव्यक्तिवाद इत्यादि मतों का प्रतिपादन किया। उपनिषदकारों और दार्शनिकों ने रस सूत्रमूलक शैलियों से समझाने की कोशिश की है – 'रस्यते इति रस:' जो सरसता को जगाता है, जो अपनी प्रतिक्रिया में अलौकिक आनंद का कारण है, वह ही रस है।1 (चौधरी, 2017, पृ. 197) रस का मूलाधार भाव है। मानव मन में प्रत्येक क्षण भाव संरचित होते रहते है। भाव को ही मनुष्य अपनी कला क्रियाओं में अभिव्यक्त करता है जो रस सृष्टि का कार्य करता है। रस मनुष्य जीवन का एक महत्वपूर्ण परम तत्व है जिसकी अनुभूति कर वह परब्रह्मा पथ की ओर अग्रसर होता है। इसीलिए रस लौकिक से परलौकिक के दर्शन में माध्यम का कार्य करता है।

डॉ सुरेशव्रत राय ने लिखा है, "रस अनिवार्यतः अनुभवजन्य है, चाहे संगीत रस हो, चाहे काव्य रस हो, सभी अनुभूतिजन्य है। अतः इसकी व्याख्या करना कठिन है फिर भी 'रस' न केवल आध्यात्मिक जीवन में बल्कि लौकिक जीवन की महत्वपूर्ण रागात्मक वृति है यह एक सम्पूर्ण मानसिक चेतना है जिसे केवल अनुभव किया जा सकता है"।2 (डॉ महारानी शर्मा, 2021, पृ. 144) रसानुभूति के लिए मनुष्य द्वारा अभिव्यक्त कृतियों में रस सृष्टि करने वाले तत्वों का होना आवश्यक है। ये तत्व किसी भी रूप में हो सकते है जैसे संगीत में 'नाद' रस सृष्टि का परम तत्व है, काव्य में 'पद' व इसी प्रकार नाट्य मे पात्रों के अभिनय में 'भाव' रस सृष्टि का परम तत्व है।

रस की लिपिबद्ध व्याख्या सर्वप्रथम महर्षि भरत कृत नाट्यशास्त्र मे प्राप्त होती है। रस से सम्बंधित उनका प्रसिद्ध सूत्र है –

"तत्र विभावनुभाव व्याभिचारी संयोगदर्स: निष्पत्ति"

अर्थात विभाव, अनुभाव और व्याभिचारी के संयोग से रस निष्पत्ति होती है।[3] (डॉ महारानी शर्मा, 2021, पृ. 144) भरत मुनि के इस कथन से यह तथ्य पुष्ट हो जाता है कि रस का मूलाधार भाव है। भाव हर क्षण हमारे मन मे संरचित होते रहते है। भरत मुनि ने नाट्यशास्त्र में इसी आधार पर मानव हृदय में विद्यमान स्थायी भाव के आठ प्रकार बताए- रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय आदि और बाद में नाट्यशास्त्र के टीकाकार आचार्य अभिनवगुप्त ने अभिव्यक्ति सिद्धांत को पूर्णता प्रदान करते हुए "निर्वेद" भाव और जोड़ा। भक्ति काल में वात्सल्य को दसवां स्थायी भाव स्वीकार किया गया। इस प्रकार स्थायी भावों की कुल संख्या दस मानी गई है जैसे :- रति, हास, शोक,

क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय, निर्वेद, वत्सल आदि। ये सभी भाव मनुष्य जीवन में परिस्तिथियों के अनुसार परिलक्षित होते रहते है व रस सृष्टि का कारण बनते है। महर्षि भरत के अनुसार प्रधान रस चार है – शृंगार, रौद्र, वीर एवं वीभत्स। इन्हीं से क्रमशः हास्य, करूण, अद्भुत एवं भयानक रसों की उत्पत्ति होती है। शृंगार की अनुकृति हास्य, रौद्र का कर्म करूण, वीर का कर्म अद्भुत एवं वीभत्स का दर्शन भयानक रस है। इस प्रकार नाट्य में आठ रसों का आविर्भाव होता है तथा विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस निष्पत्ति होती है।[4] (वसंत, october 2023, पृ. 425) है। नाट्यशास्त्र के टीकाकार अभिनवगुप्त ने नौवां रस शांत रस बताया व अभिनवगुप्त के परवर्ती विश्वनाथ ने दसवां रस वात्सल्य जोड़ा। वात्सल्य रस भक्ति कालीन कवियों की देन है प्राचीन आचार्यों ने वात्सल्य रस को स्वीकृति नहीं दी थी। रस हर क्षेत्र में व्याप्त है फिर चाहे वह मनुष्य की रोजमर्रा की क्रियाएँ ही क्यों न हो जैसे बोलना, चलना, बैठना, उठना, खाद्य पदार्थ खाना, वार्तालाप करना इत्यादि। इन्ही सब क्रियाओं में एक क्रिया संगीत भी है जिसको ललित कलाओं में सर्वप्रथम स्थान प्राप्त है। संगीत में नाद को रस सृष्टि का परम तत्व माना गया है। स्थिर आंदोलन वाली कर्णप्रिय संगीतोपयोगी ध्वनि को नाद कहा गया है। ध्वनिवादी आचार्यों ने रस के आधार पर ध्वनि के तीन भेद किए है- वस्तु ध्वनि, आकार ध्वनि तथा रस ध्वनि। इन तीनों ध्वनि में उन्होंने रस ध्वनि को ही श्रेष्ठ माना है।[5] (चतुर्वेदी, पृ. 766) यही रस ध्वनि अथवा नाद ही संगीत का आधार है। हमारा सम्पूर्ण ब्रह्मांड नाद से व्याप्त है। नाद से ही संगीत के स्वरों की उत्पत्ति हुई है। पंडित ओंकारनाथ ठाकुर के अनुसार :- "शब्द हो न हो केवल नाद के बल से रस निष्पत्ति हो जाती है।[6] (प्रणव - भारती, पृ. 21)

'संगीतरत्नाकर' के स्वरगताध्याय के तीसरे प्रकरण में आचार्य शारंगदेव ने कहा है –

आत्मा विवक्षमाणोऽयं ततः प्रेरयते मनः।
देहस्थं वहिनमाहन्ति स प्रेरयाति मारुतम्।
ब्रह्माग्रन्थिस्थितः सोऽथ क्रमादूध्वपथे चरन्।
नाभिहृत्कठमूर्धास्येष्वाविर्भाव्यति ध्वनिम्।

अर्थात – जब आत्मा को बोलने की इच्छा होती है तब वह मन को प्रेरित करता है; मन देहस्थ अग्नि को प्रेरणा देता है; अग्नि वायु का चलन करती है; तब ब्रह्मयग्रन्थि स्थित वायु क्रमशः ऊपर छड़ती हुई नाभि, हृदय, कंठ, मूर्धा और मुख इन स्थानों से पाँच प्रकार के नाद उत्पन्न करती है। इन नादों का सम्बंध स्वर से है और स्वरों की सहायता से भाव तथा रस की उत्पत्ति होती है।[7] (वसंत, october 2023, पृ. 427)

संगीत के माध्यम से हम अपने भावों को अभिव्यक्त करते है ईसीलिए संगीत अथवा नादसाधना को रसास्वादन करने के लिए सशक्त साधन माना गया है क्योंकि संगीत की ध्वनि तरंगे हमारे हृदय को एक जगह केन्द्रीयभूत कर भावनात्मक और मानसिक तृष्णा को शांत करती है। संगीत का सीधा सम्बंध हृदय से है ईसीलिए मनुष्य संगीत के माध्यम से रसानंद तत्व की अनुभूति करने की खोज मे प्रयासरत रहते है जिससे वह अपने समस्त रजोगुणी व तमोगुणी विकारों से परे होकर सुखमय जीवन व्यतीत कर सकें।

प्राचीन शास्त्रकारों ने स्वरों का सम्बंध रस के साथ बताया है;

सरी वीरेद्भुते रौद्रे धा वीभत्से भयानके।
कार्यौ गनी तु करुणा हास्यशृंगारयोर्मपौ।। "नाट्यशास्त्र"

अर्थात –षडज, ऋषभ स्वर वीर, रौद्र तथा अद्भुत रसों के पौषक है। धैवत स्वर भयानक व वीभत्स रसों का पौषक है। गंधार तथा निषाद स्वर करूण रस के पौषक है। मध्यम व पंचम स्वर से हास्य व शृंगार रसों का पौषण होता है।

संगीत दर्पण के अनुसार :-"षड्ज तथा ऋषभ- अद्भुत, वीर व रौद्र; धैवत – वीभत्स तथा भयानक; गंधार तथा निषाद -करूण और मध्यम तथा पंचम हास्य रस के पौषक है"।8 (दामोदर, पृ. प्रथम अध्याय, श्लो. 91)

पं. शारंगदेव के अनुसार :- "सा तथा रे वीर; ग और नि करूण तथा म और प हास्य एवं शृंगार रस की सृष्टि करते है"।9 (शारंगदेव, पृ. प्रथम अध्याय, श्लो. 59)

ईसी प्रकार कोमल स्वरों के द्वारा करूण, वियोग, शृंगार व शांत रस की निष्पत्ति होती है। प्राचीन शास्त्रकारों ने किसी एक स्वर द्वारा किसी एक रस की उत्पत्ति मानी है किन्तु वास्तव में देखा जाए तो एक ही स्वर विभिन्न रागों में अपने सहयोगी स्वरों के साथ मिलकर विभिन्न रस सृष्टि करता है। यदि कोई एक स्वर एक ही प्रकार की रस सृष्टि करने को बाध्य होगा तो सभी रागों की रस प्रकृति एक सी ही हो जाएगी। उद्धारण के लिए यदि षड्ज स्वर वीर रस का पौषण करता है और पंचम स्वर शृंगार रस का पौषण करता है तो अधिकतर जिन भी रागों में षड्ज और पंचम का प्रयोग होता है वो राग शृंगार रस या वीर रस प्रधान राग हो जाएंगे; किन्तु ऐसी बात नहीं है। इसीलिए राग में रसोत्पत्ति के लिए एक स्वर अपने अन्य सहयोगी स्वरों की भी सहायता लेता है व जब ये स्वर रागों मे अपना स्थान ग्रहण करते है तब ईन्हीं स्वरों द्वारा राग का भाव स्वरूप बनता है व रस निष्पत्ति होती है। राग भारतीय शास्त्रीय संगीत का आधार है। मतंग मुनि ने अपने ग्रंथ बृहदेशी में सर्वप्रथम राग शब्द का उल्लेख किया व उसकी परिभाषिक रूप से व्याख्या भी की

'योऽसौ ध्वनि विशेषस्तु स्वरवर्ण विभूषित सराग कथितो बुधै'

अर्थात स्वर और वर्ण से युक्त वह ध्वनि विशेष या स्वरावलि जो मन को आनंद दे वह राग कहलाती है।[10] (डॉ महारानी शर्मा, 2021, पृ. 40)

रंजकता राग का परम गुण है जिसका उद्देश्य मनुष्य का मनोरंजन करना व आनंद प्रदान करना है। इसीलिए संगीत को रसानुभूति का परम साधन माना गया है। पंडित भातखण्डे जी ने 'हिन्दुस्तानी संगीत-पद्धति' में स्वरों के अनुसार रागों के जो तीन वर्ग नियत किए है; उन तीनों वर्गों में पंडित जी ने रसों का समावेश इस प्रकार करते हुए सुझाव दिया है-

- रे,ध कोमल वाले संधिप्रकाश रागों में,शांत व करूण रस।
- रे, ध शुद्ध वाले रागों में शृंगार रस।
- ग, नि कोमलवाले रागों में वीर रस। [11] (वसंत, october 2023, पृ. 426)

संगीतज्ञों व विद्वानों ने स्वरों के साथ साथ संगीत में प्रयुक्त होने वाली लय एवं ताल को भी रस निष्पत्ति से जोड़ा है। लय संगीत में होने वाली निरंतर क्रियाओं के बीच का अंतराल या घटक है। लय ही संगीत को आनंद सृजन के योग्य बनाती है। लय स्वरों के संचालन को नियमित कर सांगीतिक रचना को सजीवता प्रदान करती है। विविध लयों में बांधकर स्वर अलग अलग भावों का प्रतिपादन करते है। भारतीय शास्त्रीय संगीत में लय के तीन प्रकार माने गए है – विलम्बित लय, मध्य लय और द्रुत लय। लय की प्रकृति राग रूप व विभिन्न परिस्तिथियों पर निर्भर करती है व उसी के अनुसार लय रस निष्पत्ति में सहायक तत्व के रूप मे काम करती है। रस सृष्टि के लिए भिन्न प्रकार के गीतों के साथ भिन्न प्रकार की लयों का प्रयोग होता है जैसे ख्याल के लिए विलम्बित लय, ठुमरी के लिए मध्य लय और तराना के लिए द्रुत लय आदि। *श्रीमती विजय लक्ष्मी जैन के अनुसार :- " वाद्यों के साथ साथ इन पर बजने वाली तालों व लय का भी रस पर प्रभाव पड़ता है। विलम्बित लय के ठेके – तिलवाड़ा, एकताल, तथा झूमर आदि करूण व शांत रस की प्रधानता के लिए होते है। खुले बोलो के ठेके- चौताल, आड़ाचौताल तथा सूलताल आदि वीर अथवा भक्ति रस प्लावित करते है तथा शृंगार रस में सहायक होते है।*[12] *(लक्ष्मी, पृ. 681)*

महर्षि भरत ने विभिन्न रसों की निष्पत्ति के लिए तीन प्रकार की लय का वर्णन कुछ इस प्रकार किया है –

- हास्य एवं शृंगार रस के लिए मध्य लय
- करूण, वीभत्स एवं भयानक रस के लिए विलम्बित लय
- वीर, रौद्र एवं अद्भुत रस के लिए द्रुत लय

लय के संदर्भ में रस निष्पत्ति प्रत्यक्ष रूप में न होकर परोक्ष रूप में मानी जाती है क्योंकि केवल लय का स्वतंत्र रूप रस निष्पत्ति नहीं कर सकता। यहाँ लय का प्रयोग रस निष्पत्ति में सहायक तत्व के रूप में है। इसीलिए लय हमेशा ताल में समाहित होकर राग की प्रकृति व उसमे निहित बंदिश के अनुकूल होकर रस सृष्टि का कार्य करती है। ताल, संगीत को एक निश्चित नियम या समय के बंधन में बांधकर उसे एक

अनुशासित रूप प्रदान करती है। तालों में गति भेद उत्पन्न करके रस निष्पत्ति सम्भव होती है। जैसे विभिन्न स्वरों द्वारा विभिन्न रसों की उत्पत्ति होती है ठीक उसी प्रकार विभिन्न तालों द्वारा विभिन्न रसों की उत्पत्ति होती है।

गीत शैलियों के अनुसार तालों की स्वाभाविकता, भिन्नता, तालखंड, पाटाक्षर को मध्य नजर रखते हुए संगीत में तालों को प्रयोग करने का विधान है।

डॉ. अरुण सेन यह स्वीकार करते है की तालविहीन संगीत केवल करूण रस को प्रदर्शित करने में सक्षम होता है। स्वरों की संगति से शेष सभी रसों के परिपाक व उनकी पूर्णता जिसे हम रस निष्पत्ति कहते है, ताल के विभिन्न गति भेदों के बिना सम्भव नहीं।13 (सेन, पृ. 53)

स्वरों द्वारा रस उत्पत्ति की भांति संगीत विद्वानों ने भिन्न भिन्न तालों द्वारा रसों की अवतारणा बतायी है –

- तीन ताल – शृंगार रस, करूण रस, वात्सल्य रस
- झपताल – शृंगार रस
- आड़ा चौताल – भक्ति रस, वीर रस, रौद्र रस
- एक ताल – शृंगार रस, करूण रस
- तिलवाड़ा – शांत रस
- दीपचंदी – शृंगार रस, करूण रस
- चौताल – वीर रस
- धमार ताल – वीर रस, शृंगार रस
- सूलताल – वीर रस, भक्ति रस, शृंगार रस
- तीव्रा – वीर रस
- कहरवा – शृंगार रस, वात्सल्य रस
- दादरा – शृंगार रस, वात्सल्य रस

संगीत में रस उत्पत्ति के लिए लय और ताल के साथ साथ गायन शैली और बंदिश के बोल का भी महत्वपूर्ण योगदान रहता है। *कविराज विश्वनाथ के अनुसार :- "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्"।*[14] ('यमन', पृ. 272) काव्य के नियमों का पालन करते हुए बंदिशों का निर्माण हमें हमारे वांछित रस की अनुभूति में सहायता करता है। यदि बंदिश के बोल राग प्रकृति के अनुकूल हो तो रस अनुभूति अवश्य हो ही जाती है जैसे – यदि श्रोतागण राग 'मियां की मल्हार' का गायन सुन रहे है और उसमें निबद्ध बंदिश के बोल वर्षा ऋतु का बखान करते है व उस ऋतु में होने वाली गतिविधियां जैसे बिजली चमकना, बादल का गर्जना, नदियों का जिक्र, चारों तरफ हरियाली, मोर, पपीहा, कोयल इत्यादि का बखान हो तो श्रोतागणों को कल्पना करने में आसानी होती है और वह उस कल्पना का सहारा लेकर रसानुभूति करते है व आनंद प्राप्त करते है। इसीलिए बंदिश का निर्माण करते समय कलाकार को शब्द और स्वर दोनों का सामंजस्य स्थापित करना अनिवार्य समझना चाहिए। इसी के साथ साथ संगीत की भिन्न गायन शैली विभिन्न रसों की उत्पत्ति करती है जैसे ध्रुपद द्वारा वीर, करूण एवं शांत रस की उत्पत्ति मानी गयी है। धमार द्वारा शृंगार रस की उत्पत्ति मानी गयी है। ख्याल गायन में रस उत्पत्ति राग व उसमें निबद्ध रचना के बोल के आधार पर होती है। ठुमरी, दादरा, चैती द्वारा शृंगार रस की उत्पत्ति मानी गयी है। ठुमरी, दादरा व चैती संगीत की उपशास्त्रीय विधाएँ है व इनमें रस उत्पत्ति की कोई सीमा नहीं है। तराना, टप्पा द्वारा शृंगार, हास्य एवं रौद्र रस की उत्पत्ति मानी गई है। इसी प्रकार संगीत में रस उत्पत्ति के विभिन्न तत्व जैसे अलंकार, गमक, खटका, मुर्की, तान, कण, मींड़, सूत, स्थाय काकु भेद इत्यादि भी अहम भूमिका निभाते है। काकु भेद में हम स्वरों को इच्छा व आवश्यकता अनुसार उतार-चढ़ाकर, आवाज को मधुर या कर्कश और तीव्र बनाकर गायन में रस उत्पत्ति के लिए प्रयोग करते है। काकु भेद

कलाकार की क्रियात्मक क्षमता को भी प्रदर्शित करता है। ये सभी सांगीतिक तत्व कलाकार आवश्यकता अनुसार अपने गायन में प्रयोग करके श्रोता को भाव विभोर कर स्वयं भी रस अनुभूति कर सकता है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध पत्र में हमने संगीत गायन में रस सृष्टि करने वाले महत्वपूर्ण तत्वों को जाना। संगीत गायन एक ऐसी कला है जिसमें स्वर, राग व ताल का एक अनोखा मिश्रण होता है। संगीत गायन द्वारा मनुष्य ऐसी रस अनुभूति करता है जिसे मनुष्य बुद्धि से प्राप्त करना असंभव है व जहां वाणी विफल हो जाती है। रसानुभूति का विषय भौतिक न होकर मनोवैज्ञानिक है क्योंकि स्वर का प्रभाव मनुष्य के चित्त पर पड़ता है और जब मनुष्य का चित्त प्रसन्न होता है तो वह स्वयं के स्वार्थ से परे होता है। संगीत द्वारा रस की अनुभूति बहुत सूक्ष्मतम कार्य है। यदि संगीत सुनकर श्रोता और कलाकार के बीच तादात्म्य स्थापित न हो तो संगीत गायन व्यर्थ है। वास्तव में संगीत का प्राण ही रस है। संगीत गायन द्वारा मनुष्य भावों की ऐसी अभिव्यक्ति करता है जिससे वह स्वयं के साथ साथ श्रोताओं के लिए भी परब्रह्म पथ अग्रसर करता है। ब्रह्मा का स्वरूप आनंदमय है और आनंद की अनुभूति को ही रस माना गया है व प्रत्येक ललित कला को ब्रह्मा की अभिव्यक्ति और प्राप्ति का साधन माना गया है।

संदर्भ

1 सुभाष रानी चौधरी. (2017). संगीत के प्रमुख शास्त्रीय सिद्धांत. दरियागंज, नई दिल्ली -110 002, नई दिल्ली : कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स.
2 डॉ जया शर्मा डॉ महारानी शर्मा. (2021). संगीत मणि भाग 1 (संस्क. 1). वाराणसी, उत्तरप्रदेश : लूमिनस बुक्स.
3 डॉ जया शर्मा डॉ महारानी शर्मा. (2021). संगीत मणि भाग 1 (संस्क. 1). वाराणसी, उत्तरप्रदेश : लूमिनस बुक्स.
4 वसंत. (october 2023). संगीत विशारद. (डॉ लक्ष्मी नारायण गर्ग, सं.) उत्तरप्रदेश: संगीत कार्यालय हाथरस.
5 पंडित सीताराम चतुर्वेदी. (दि.न.). भारतीय एवं पाश्चात्य रंगमंच.
6 पं. ओंकारनाथ ठाकुर. (दि.न.). प्रणव - भारती
7 वसंत. (october 2023). संगीत विशारद. (डॉ लक्ष्मी नारायण गर्ग, सं.) उत्तरप्रदेश: संगीत कार्यालय हाथरस.
8 पं. दामोदर. (दि.न.). संगीत दर्पण.
9 पंडित शारंगदेव. (दि.न.). संगीतरत्नाकर
10 डॉ जया शर्मा डॉ महारानी शर्मा. (2021). संगीत मणि भाग 1 (संस्क. 1). वाराणसी, उत्तरप्रदेश : लूमिनस बुक्स
11 वसंत. (october 2023). संगीत विशारद. (डॉ लक्ष्मी नारायण गर्ग, सं.) उत्तरप्रदेश: संगीत कार्यालय हाथरस.
12 श्रीमती विजय लक्ष्मी. (दि.न.). संगीत दर्शन .
13 डॉ अरुण कुमार सेन. (दि.न.). भारतीय तालों का शास्त्रीय विवेचन.
14 अशोक कुमार 'यमन'. (दि.न.). संगीत रत्नावली